www.samaylive.com
राष्ट्रीय सहारा
सच कहने की हिम्मत
राष्ट्रीयता • कर्त्तव्य • समर्पण
देहरादून • वाराणसी से प्रकाशित
नई दिल्ली। रविवार • 7 जुलाई • 2013

sunday समय
रविवार 7 जुलाई • 2013

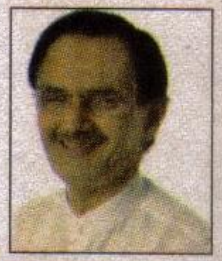

अध्यात्म

■ डॉ. एन. के. शर्मा

सीढ़ी जैसा है गुरु

सच्चा गुरु लोगों को अपने पीछे आने से रोकता है। वह कहता है, 'अरे पागल, मैंने अपने पंख पहचाने हैं और इन पंखों से मैं अकेला ही उड़ सकता हूं। मेरे पीछे-पीछे (बगैर पंख पहचाने) उड़ने की कोशिश करेगा तो गिर जाएगा। हर व्यक्ति को अपने पंख पहचानने ही पड़ेंगे अगर उसको मुक्ति के आकाश में उड़ना है, मेरे पंख तुम्हारे नहीं काम आने वाले।' गुरु एक सीढ़ी है, ऊपर चढ़ाने के लिये। इस गुरु रूपी सीढ़ी का सहारा लेकर ऊपर उठ जाना होता है। सीढ़ी के साथ ही चिपक गये, सीढ़ियों के ही गुणगान में बैठ गये, सीढ़ी के साथ बंध गये तो तुम्हारे ऊपर जाने की संभावना समाप्त हो गई। ईश्वर सीढ़ी देता है ऊपर उठने के लिये और तुम तो सीढ़ी को ही पीठ के पीछे बांधकर जीवनभर इस भ्रम में जीते हो कि मिल गई मंजिल, अब तो चढ़ने की पक्की गारंटी। इसी तरह सीढ़ी पीछे बांधकर हमें कभी ऊपर नहीं चढ़ पाते हैं।

लोग समझते हैं कि बस, गुरु के पीछे लग जाओ गुरु हमें तार देगा। कोई गुरु किसी को नहीं तार सकता। वह तुम्हारे बंधन काटकर सत्य के समंदर में धकेल सकता है, बस। तैरना तो तुमको ही पड़ेगा। अगर गुरु का सहारा साथ में ले जाओगे तो जीवनभर तैर नहीं पाओगे, ऊपर-ऊपर ही रह जाओगे। कोई संसार में आपको तार नहीं सकता। हरेक को स्वयं ही तैरना होता है। जिस तरह युवा होने के बावजूद माता-पिता के भरोसे जीने वाले का कोई आत्मसम्मान या अपनी कोई गरिमा नहीं होती, उसी

(पेज एक का शेष)

सीढ़ी जैसा है...

सारी भीड़ का कोई न कोई गुरु होता है। जब हर व्यक्ति कोई न कोई गुरु के पीछे भाग रहा होता है तो भीड़ में खड़े आदमी को, जिसका कोई गुरु नहीं है, उसको ऐसा लगता है जैसे वह कुछ चूक रहा है, गलती कर रहा है। वह भीड़ से अलग हो गया है, भीड़ सहूलियत है इसलिये वह भी किसी न किसी बाजार के प्रचलित गुरु को पकड़ लेता है और निश्चिंत हो जाता है कि उसका भी कोई गुरु है। वह भी किसी बाड़े की भेड़ बन जाता है और जैसे-जैसे भीड़ चलती है या उसको चलाया जाता है वैसे भेड़चाल में सब अनुयायी चलते जाते हैं। वे इस भ्रम में जीते जाते हैं कि गुरु है तो तार ही देगा या तर जाएंगे, आज नहीं तो कल। ईश्वर से साक्षात्कार हो ही जाएगा। इस भ्रम में भीड़ सदियों तक बैठी रहती है। चुपचाप अनुयायी बनी रहती है। इतना ही नहीं, अपने बच्चे, पत्नी, रिश्तेदार को, मित्रों को भी इस भेड़ के झुंड में झोंकने की कोशिश करते रहते हैं।

जो गुरु तुम्हें नियम और अनुशासन देता है, विशेष विचार, धारणाएं, मान्यताएं एवं दर्शन देता है, दिशा देता है, मंत्र देता है, विशेष वस्त्र, विशेष नाम देता है वह सच्चा गुरु नहीं। इनसे बचें। ऐसा कार्य अंधा गुरु ही कर सकता है क्योंकि वह खुद अपनी दार्शनिकता से बंध गया है। वह खुद चिपक गया है नियम, अनुशासन के साथ। ऐसा गुरु तुम्हें कभी मुक्त नहीं कर सकता- 'अंधे-अंधे को ठेलिया दोनों कूप पड़ंत'। जो गुरु तुम्हें कहता है मुझसे दीक्षित हो जाओ, वह तुम्हें बांध रहा है एक विशेष विचार या दर्शन से। जैसे ही तुम किसी भी विचार, दर्शन या धारणाओं से बंधते हो, गुलाम हो जाते हो। तुम्हारी मुक्ति असंभव हो जाती है। ऐसा गुरु केवल अपने आंकड़े बढ़ा रहा होता है। आत्मबोध का सार ही यही है कि सारे विचारों से, मान्यताओं से, दर्शनों से मुक्त हो जाओ, सही गलत, पाप-पुण्य से ऊपर उठ जाओ।

जो गुरु बनाये वही सदगुरु

दीक्षा का अर्थ ही यही है कि तुम्हारी निजताओं को नष्ट कर देना और किसी दूसरे रंग में रंग जाना। सच्चा गुरु अपना कुछ भी तुम्हें नहीं देता। अगर देता है तो गुरु ही मत समझना। वह तुम्हें आंख देता है, तुम्हारी निजता से परिचय करवाता है, तुम्हारी अपनी सुगंध, अपने स्वभाव में खिलने की प्रेरणा देता है। अपने स्वयं के ही रंग में पूरी तरह रंग जाने की व्यवस्था देता है। तुम्हारी शक्तियों की पहचान करवा कर तुम्हारे अपने ही जीवन का मालिक बनाता है। सच्चा गुरु शिष्य या अनुयायी नहीं। सबके भीतर छुपे हुए गुरुत्व की पहचान करवाता है। सभी को गुरु बनाता है। जो गुरु बनाए वह गुरु, जो शिष्य बनाए वह नेता या मुखिया। उन्हें गुरु कभी नहीं कहें।

जैसे ही आप किसी विशेष, विचार, विशेष दर्शन, विशेष मंत्रों, विशेष वस्त्रों या विशेष नियम-अनुशासन से जुड़ जाते हैं। आप अपने आपको नष्ट कर देते हैं। जीवन का सत्य आपसे कोसों दूर हो जाता है। आपकी मुक्ति या जागृति असंभव हो जाती है।

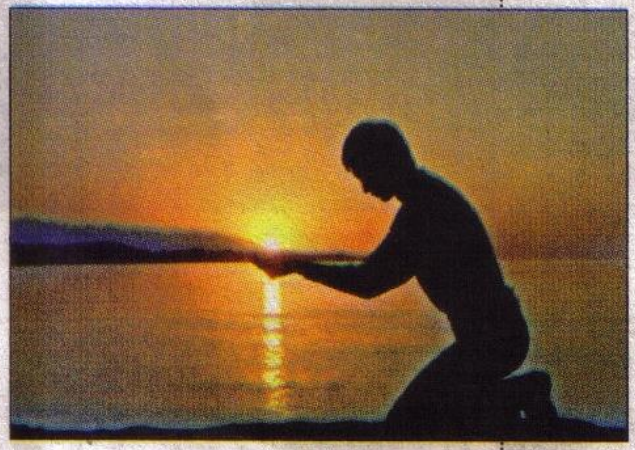

किसी आश्रम में जाने से किसी गुरु के पीछे भागने से किसी संप्रदाय से जुड़ जाने से, किसी भीड़ का हिस्सा बन जाने से तुम कभी दुखों से मुक्त नहीं हो सकते क्योंकि तुम अपने आपसे भागते हो, दूसरों पर निर्भर होते हो और बाहर ही रह जाते हो। दुख से मुक्ति के लिये- आत्मज्ञान के लिये तुम्हें बाहर की सारी दासता से मुक्त होना पड़ेगा, अपने भीतर जाना पड़ेगा, दुखों के कारणों को जानना पड़ेगा और जानकर खुद को ही इनसे मुक्त होना पड़ेगा। तुम्हें स्वयं अपना ही दीपक बनकर अपने अंधकारों से मुक्त होना पड़ेगा।

कब तक दौड़ते रहोगे इन गुरुओं के पीछे? कब जागकर अपने भीतर जाओगे? जो भी बाहर भागा, उसे आज तक कुछ नहीं मिला। जो भीतर भागा, उसे सबकुछ मिल गया। दूसरे के खाये हुए रसगुल्ले के स्वाद से तुम्हें क्या मतलब। वह लाख बखान करे कि वह उसका अनुभव है। उसने चखा है तो चटकारे ले-लेकर बखान कर रहा है। तुम्हें तो खुद अपना रसगुल्ला खाना होगा। अपना स्वाद चखना होगा। तब वह तुम्हारा निजी सच्चा अनुभव होगा।

हम दूसरों के खाये हुए रसगुल्ले के स्वाद पर नाच रहे होते हैं। उनके अनुभवों का आप बखान कर रहे होते हैं। आपका अपना कोई वास्तविक स्वाद कोई प्रत्यक्ष अनुभव नहीं होता। हम भ्रम और झूठ में जिये चले जाते हैं। भीतर जाओ! अपना रसगुल्ला खाओ! दूसरों का स्वाद हमारे लिए निरर्थक है।

विद्वता संतत्व का मापदंड नहीं

यह अजीब सी विडंबना है कि संसार में हम विद्वान पुरुषों को आध्यात्मिक संत या गुरु मान बैठते हैं जो वास्तव में, संत न होकर आध्यात्मिक विषय के प्रोफेसर होते हैं। ये वेद, उपनिषद, गीता, पुराणों की खूब व्याख्या करते हैं। अधिकतर तो इसमें कथाकार होते हैं परंतु इनमें 99 प्रतिशत लोगों को आत्मज्ञान का रतीभर भी अनुभव नहीं होता। ये श्रेष्ठ प्रवक्ता होते हैं। नेताओं की तरह बड़े भावुक, बड़ी ऊंची-ऊंची व्याख्या करते हैं। इनके पास भीतर से उठा हुआ ज्ञान रतीभर भी स्वादिष्ट नहीं होता। ये वही पुराना बंधा-बंधाया, रटा-रटाया, उधार का, दूसरों के स्वाद का गुणगान कर रहे होते हैं। ऐसे लोगों को सुनने से कभी कोई रूपांतरित नहीं होता।

इनके पीछे उल्टे हमारे जीवन का समय नष्ट हो जाता है। सैकड़ों महात्मा गीता पर व्याख्यान करते हैं, वह कृष्ण का अनुभव है, उनका नहीं। यह बात सिद्ध करती है कि उनके अन्दर अपनी कोई गीता पैदा नहीं हुई। इसलिए वे दूसरे की गीता का सहारा लेते हैं। जिस दिन उनके भीतर अपनी गीता पैदा हो जाती है तो वे वेद, उपनिषद या अन्य गीताओं की कभी चर्चा नहीं करेंगे। उनकी कृष्ण से हटकर एक नई गीता होगी, उनकी अपनी सुगंध होगी, मौलिकता होगी। इसी कारण बुद्ध, महावीर, कृष्ण, ईशु और मीरा में एक समानता नहीं है। इन सबकी अपनी निजता है और अपनी गीता है। आत्मज्ञान से उठे संत के एक-एक शब्दों में मोती झर रहे होते हैं। हीरे होते हैं। उनके पास उधार का कुछ भी नहीं होता। भीतर से कंगाल विद्वान ही उधार पर जीता है। भीतर से समृद्ध गुरु तो हीरे लुटा रहा होता है।

(लेखक रेकी हीलिंग फाउंडेशन, दिल्ली के संस्थापक हैं)

■

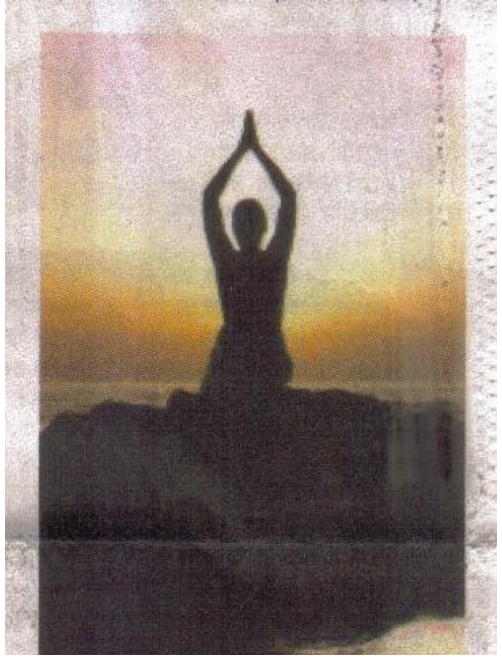

तरह गुरु के साथ चिपके हुए शिष्य की भी अपनी कोई गरिमा नहीं होती। या तो वह जुड़ा हुआ है आवश्यकता के मारे या डर के मारे। और अगर प्रेम से भी जुड़ा हुआ है तो वह भी उसी तरह मुक्त नहीं होता जैसे बुद्ध के साथ प्रेम में फंसा उनका परम शिष्य आनंद जिसे भगवान बुद्ध ने कहा कि मेरी मृत्यु ही तेरी मुक्ति है और ऐसा ही हुआ। गुरु एक माइलस्टोन (मील का पत्थर) है जो चौराहे पर खड़े होकर कह रहा है कि जा बेटा, ये मुंबई का रास्ता है। मैं जाकर आ गया हूं इसलिये तुझे बता रहा हूं। परंतु आपने यह कहकर अपने आपको वहां चौराहे पर रोक लिया कि वाह गुरुजी, आपने तो हमें मुंबई का मार्ग बताया। हम तो बस आपके चरणों के दास बनकर यहीं आपकी सेवा करेंगे। अगर आपको गुरु ने ही रोक लिया तो समझो, आप गलत गुरु के हाथों में फंस गये और आप भी वहां रुक गये तो आप मुंबई कभी नहीं पहुंच पाएंगे।

सद्गुरु तुम्हें एक नक्शा भी देता है जिसको हम गीता, कुरआन, बाइबिल या गुरुग्रंथ कहते हैं जिनमें यह लिखा होता है कि कैसे मंजिल तक पहुंचा जाये परंतु लोग जीवनभर इन ग्रंथों का पाठ करते रह जाते हैं और बड़े गर्व से कहते हैं कि मैं 50 साल से गीता का पाठ करता हूं

लोग पथ प्रदर्शक 'माइलस्टोन' के साथ ही चिपक जाते हैं। जो उंगली चांद की ओर इशारा करती है, उसी की पूजा करना शुरू कर देते हैं। उंगली पर ही लटक जाते हैं और चांद को भूल जाते हैं। गुरु भी खूब इनके मजे ले रहा होता है। इस खेल को आध्यात्मिक खेल कहते हैं। सद्गुरु तुम्हें एक नक्शा भी देता है जिसको हम गीता, कुरआन, बाइबिल या गुरुग्रंथ कहते हैं जिनमें यह लिखा होता है कि कैसे मुंबई (मंजिल तक) पहुंचा जाये परंतु लोग जीवनभर इन ग्रंथों का पाठ ही करते रह जाते हैं और बड़े गर्व से कहते हैं कि मैं 50 साल से नियमित गीता का पाठ कर रहा हूं। जैसे कोई यूं कह रहा हो कि मैं 50 साल से मुंबई का नक्शा पढ़े जा रहा हूं। नक्शा पढ़ने से भला कभी कोई मुंबई पहुंचेगा? नक्शा जरूरी है परंतु कब तक? जब तक मुंबई का रास्ता पूरी तरह समझ में न आ जाये, रास्ता समझ में आते ही सारे नक्शे बेकार हो जाते हैं।

नक्शे कब तक चाहिये- दो दिन, चार दिन, दस दिन? समझने के बाद फिर नक्शों की कोई जरूरत नहीं रह जाती। सदियों से आदमी नक्शे पढ़े जा रहा है, इसलिये कोई भी मुंबई पहुंचता नजर नहीं आता और ऐसे ही चलता रहा तो मुंबई केवल सबकी कल्पना में ही रहेगा। हर आदमी भेड़चाल की तरह कोई न कोई गुरु को पकड़ लेना चाहता है और लोग समझते हैं कि वकील, डॉक्टर की तरह हमारा कोई गुरु भी है।

जारी पेज 2